IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

समकालीन समाज में जनवादी चेतना का विश्ले”ाणात्मक अध्ययन

मनी”ा कुमार
‘ाोधार्थी (हिन्दी विभाग)
जीवाजी विश्वविद्यालय
ग्वालियर (म0प्र0)

‘ाोध–सार

समकालीन समाज में जनवादी चेतना का प्रभाव दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है। जिससे समाज में कई प्रकार के सामाजिक परिवर्तन प्रतिबिंबित हो रहे हैं। जनवादी चेतना प्रगतिवादी विचारधारा पर केन्द्रित है, जिसके द्वारा प्रगतिशील चेतना, सामाजिक चेतना, वर्ग चेतना, एवं आत्म चेतना के धारणाऐं विकसित हुई। यह सभी एक दूसरे के साथ जुड़ी हुई है। जो समाज के लिये एक नई संकल्पनाओं को उद्धरित करती है।

जनवादी की दृ”िट से स्वतंत्रता और सौन्दर्य की रक्षा व्यापक जन समाज की मुक्ति के लिये संघ”ार् करके ही की जा सकती है। जनवादी लेखक सामाजिक प्रश्नों को लेकर उद्वेलित होता है। अपने व्यक्तिगत रूझानों का आत्मालोचना करता है और उन पर अंकुश रखने का प्रयत्न करता है। अपने व्यक्तिगत सुख–दुख को सामाजिक सुख–दुखों से जोड़कर उन्हें व्यापक रचना संदर्भ प्रदान करता है। इस प्रकार सामाजिक, चिंता और उसके प्रति एक उदात्त मांगलिक दृ”िट, सत्य, स्वतंत्रता के लिए अनवरत संघ”ार्, दलित, उपेक्षित, ‘ाो”ाित के प्रति संवेदना तथा अन्याय, दमन और उत्पीड़न का विरोध जनवादी चिंतन का मूलाधार है।

जनवादी चेतना के द्वारा विभिन्न प्रतिमानों को एक नई वैचारिक दृ”िट प्रदान की जाती है। जिससे जीवन में बहुत से जनवादी मानसिकता से जुड़ी भाव एवं विचारों का समन्वय होता है। जिससे व्यक्तिगत, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारणों का समावेशीकरण पाया जाता है।

मुख्य बिन्दु–

प्रगतिशील, वर्गचेतना, आत्मचेतना, संकल्पना, स्वतंत्रता, सौन्दर्य, आत्मलोचना, मांगलिक दृ"ट, अनवरत, उपेक्षित, संवेदना एवं दमन आदि।

'ाोध–प्रपत्र

जनवादी चेतना का संबंध मानवीय प्रगतिशील विचारधारा से है, जिसमें बहुत से जीवन के जनप्रवाय, जनश्रुति एवं जनश्रय का आपस में समकेत स्वरूप दिखलाई पड़ता है। चेतना मानव जाति के लिये ऊर्जा एवं उ"मा का तात्विक स्वरूप है। जिससे मानव में ज्ञानात्मक चेतना, भावात्मक एवं क्रियात्मक चेतना विकसित हो रही है। चेतना, अवचेतना एवं अचेतना तीनों ही एक दूसरे के अनुकूल एवं प्रतिकूल विचारों को विभिन्न अनुभूतियों से जोड़ती है, जिसमें बहुत से अनुभवों एवं वि"ायों का प्रत्यक्षीकरण पाया जाता है।

"मनु"य की चेतना उसके अस्तित्व का निर्माण नहीं करती, बल्कि इसका सामाजिक अस्तित्व ही उसकी चेतना को निश्चित करता है। अतः चेतना मानव की प्रमुख विशे"ाता है। इससे वस्तुओं वि"ायों तथा व्यवहारों का ज्ञान होता है। चेतना परिवर्तनशील होती है। उसका प्रभाव हमारे अनुभव वैचित्रय से प्रमाणित होता है और उसकी अविच्छिन्न एकता हमारे व्यक्तिगत तादात्म के अनुभव से है।"1

स्मकालीन समाज में चेतना का अस्तित्व दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है, जिसके द्वारा समाज में नई संवेदनाएँ, प्रत्यक्षीकरण, चिंतन, अनुभूति एवं जागरूकता का प्रचार–प्रसार किया जा रहा है, जिससे मानव में चिंतनात्मक, चिंतात्मक अभिवृति पनपी है जिसका संबंध सामाजिक यथार्थ एवं मानसिक जागरूकता से है, जिसमें बहुत से सांस्कृतिक मूल्य विचारों और आदर्शों का समन्वयात्मक स्वरूप दिखलाई पड़ता है। जनवादी चेतना से बहुत बड़ा वर्ग अपने अधिकारों को जानने लगा है।

"दिन–व–दिन बढ़ती हुयी गरीबी, मँहगाई और बेरोजगारी से मजदूरों, किसानों और निम्न मध्यवर्ग के लोगों का भयावह 'ाो"ाण और दमन, भ्र"टाचार, नैतिकमूल्यों का अवमूल्यन, कानूनी व्यवस्था के टूटते हुएं ढ़ांचे के साथ सामान्य नागरिक जीवन में फैलती हुई असुरक्षा की भावना, 'ाासनतंत्र में नपुंसकता और नृशंसता और नौकरशाही का उस पर गहरा होता हुआ प्रभाव, रा"टोय एकता के खंडित करने वाले पतनशील मूल्य है।"2

जनवादी चेतना के द्वारा समाज ने बहुत सी चुनौतियों एवं संघ''ोंर्ं का सामना किया हैं, ईसके द्वारा समाज में बढ़ती हुयी गरीबी, मँहगाई और बेरोजगारी को दूर करने का प्रयास किया है। जिसके लिये बहुत से आन्दोलन कवियों ने व्यक्तिगत विचार और जनवादी चिंतन को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया है, जिसमें 'ाो''ाण, दमन, भ्र''टाचार के साथ–साथ रा''टोय एकता को खंडित करके सम्प्रदायवाद और वैमनस्यता को सीमित करने का प्रयास किया मार्क्सवादीयों ने बताया। यदि विचारधारा और अवधारणाऐं भटकाने वाली होगी तो सामाजिक मूल्यों का पतन निश्चित है, जिससे बहुत सी बुराईया समाज में दिन–प्रतिदिन बढ़ेगी। वर्तमान समाज को जनोन्मुख बनाने के लिये विभिन्न प्रकार के भ्रमों को समाप्त करना पड़ेगा तभी समाज जन चेतन्य एवं प्रगतिशील बनेगा।

''जनवादी लेखक संघ ऐसे लेखकों का संगठन है। जो साहित्य की वस्तु, रूप और 'ौलियों के बारे में अपने दृ''टकोण और रूचियों की भिन्नता के बावजूद जनवाद को हमारी सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति का एक अभिन्न अंग मानते है, जो इसे हमारी सभ्यता और संस्कृति के विकास की एक अनिवार्य 'ार्त मानते हैं और उसकी रक्षा एवं विकास के संघ''ार्ं को अपना एक लेखकीय दायित्व का कर्तव्य समझते है।''3

जनवादी चेतना के संस्कृति के विकास में बहुत से लेखकों और साहित्यकारों ने अपनी विचारधारा के माध्यम से कई विकल्पों को व्यावहारिकता प्रदान की है। उन्होंने साहित्यिक मानदण्ड एवं मापदण्डों को जनवादी विचारधारा से जोड़ा और निजबद्धता अनुपमता एवं विलक्षणता ने साहित्य जगत को जनवादी चेतना पर प्रतिबिंबित किया है, जिसमें वैज्ञानिक दृ''टकोण और बहुत सी मान्यताओं को विकासात्मक बनाने का प्रयास किया है जिससे एकता, समग्रता और अधुनिकता का मानवतावादी विचारधारा पर श्रमकालिक विचारों पर एक निश्चित युगबोधनीय स्वरूप लेकर जनवाद पर केन्द्रित किया है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में बहुत से साहित्यकार एवं मीमांसकों ने जनवादी चेतना को आम जनमानस तक पहुंचाकर उसका प्रचार–प्रसार किया, जिससे समाज में प्रत्येक वर्ग का व्यक्ति पतनशील मूल्यों को त्याग कर नये मूल्य अपनाऐं।

समकालीन समाज में यथार्थवादी चिंतन परिवेश एवं वातावरण प्रकृति पर निर्भर होती है, जिससे मनु''य में कई प्रकार की चेतनात्मक, ज्ञानात्मक एवं परिवेशात्मक नई प्रतिबिम्बों का निर्माण होता है, जिसमें चेतना का संश्ले''ाणात्मक स्वरूप पाया जाता है।

''आँचलिक उपन्यासों में प्रस्तुत परिवेश अन्य उपन्यासों से भिन्न बनाता है। मनु''य के जीवन अनुभवों का चित्रण परिवेश को और रोचक बनाता है। परिवेश के गहरी और संश्लि''ट परिचय करवानें के लिये लेखक को उस अंचल से परिचित होना आवश्यक तो है लेकिन इसके साथ उसे अंचल का ज्ञान होना भी अत्यावश्यक है। एक और लेखक उसी अंचल का होता है। साथ में वह उस अंचल से सुपरिचित होकर उसका चित्रण सफलतापूर्वक करता है।''4

आँचलिकता का संबंध कई प्रकार की ग्रामीण चेतनाओं से है, जिसमें प्रमुख रूप से राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ है। चेतना के माध्यम से समाज को अधिक से अधिक सजीव बनाया जाता है, जिससे मानवीय परिवेश बदलता हैं। धीरे–धीरे कई चेतनाओं का सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप भी बदलता है। जिसमें आँचलिकता का यथार्थ सहजता से उपलब्ध होता है।

समकालीन उपन्यासों में वर्ग चेतना प्रमुख रूप से पाई जाती है। वर्ग चेतना के माध्यम से समाज में कई पकार के भाव उत्पन्न किये जाते है, जिससे समाज के माध्यम से सामाजिक, पारिवारिक एवं मनोवैज्ञानिक चेतनामयी विचारधारा एकीकृति हो जाती है। जिससे धीरे–धीरे विभिन्न वर्ग आचेतन से चेतनता की ओर पलायन करते है।

''मनु''यों की चेतना उनकी सत्ता निश्चित नहीं करती वरन् इसके विपरीत उसकी सामाजिक सत्ता उसकी चेतना को निश्चित करती है। वर्ग विहीन समाज की स्थापना ने लक्ष्य का प्राप्त करने के लिये वर्ग चेतना का अधिकाधिक प्रसार करने वर्ग संघ''ा को उसके अंतिम परिणाम तक ले जाना चाहिए। वर्ग चेतना एक ऐसा भाव है जो समान, सामाजिक स्थिति का भोग करने वाले समूचे समूह को एकीकृत करता है।''5

मार्क्सवाद, लेनिनवाद एवं स्टेलिनवाद तथा नगार्जुन ने अपने श्रम एवं विचारधारा के माध्यम से समाज एवं रा''ट को चेतन्य बनाया, जिससे वर्ग चेतना एवं वर्ण चेतना का उद्‌य हुआ। लोगों में चेतनता संबंधी मन्तव्य एवं अवधारणाऐं विकसित हुई। जो जन विकास के लिये आवश्यक है। जिसके द्वारा उच्चता, निम्नता को समाप्त करने का प्रयास किया गया, जिससे लोग अधिक से अधिक एक नई विचारधारा को लेकर समाजवाद एवं रा''ट्रवाद को अपनाऐं।

उन्नीसवीं ‘ाताब्दी में बहुत से सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन हुएँ जिससे संस्कृति, संस्कार एवं परिस्थितियों में नया पन आया। भारतीय समाज को राजनीतिक एवं सामाजिक दृ"िट से चेतनात्मक बनाने का प्रयास किया।

‘‘उन्नीसवीं ‘ाताब्दी के भारतीय सांस्कृतिक जागरण में यूरोपीय विचार धाराओं का उल्लेखनीय प्रभाव पड़ा। यूरोपीय जीवन तथा संस्कृति ने भारतीय संस्कृति की आत्मा का पुर्नस्थापन कर उसे नवीन परिस्थितियों का समझने, अपनाने और अंततः उस पर विजय पाने का अवसर दिया। भारतीय जीवन दर्शन में मानवतावाद की प्रति"ठा हुई। बीसवीं ‘ाताब्दी के प्रारंभिक व"ाों भारत की सांस्कृतिक चेतना दो दिशाओं नगरीय संस्कृति और ग्रामीण संस्कृति में विभक्त हो गई।’’6

भारतीय संस्कृति एवं जीवन दर्शन में उदारवादिता, धार्मिकता, सहि"णुता अनेकताओं में एकता एवं विश्ववंधत्व की भावना को चेतना के माध्यम से जनमानस तक भेजा ह। जिसमें बहुत से जीवन के अभ्युदय का उद्यीमान एवं तर्कात्मक चिंतन का विकास हुआ है। भारतीय संस्कृति को अधिक से अधिक चिरवंदनीय बनाने के लिये संस्कृति एवं चेतना की मुख्य भूमिका है।

नागार्जुन का समाजवादी चिंतन वि"ामताओं को दूर करने में काफी शिक्षाप्रद एवं लाभप्रद है, जिसमें बहुत सी चेतना संबंधी प्रतिक्रियाएँ है और जीवन के सशक्त् मूल्य भी है। लेखक ने अपनी विचारधारा के माध्यम से चेतन परिस्थितियों से अवगत कराया ‘‘समाजवादी यथार्थवादी सामाजिक वि"ामताओं के मूल कारण की पहचान कर उन्हें न"ट करने का प्रतिक्रियात्मक हल प्रस्तुत करता है। इसके अन्दर ऐसे समाजों का चित्र उपस्थित किया जाता है। जो उपेक्षित निम्न श्रेणी के हो तथा जीवन यापन के लिए प्रस्तुत अपनी वि"ाम परिस्थितियों से संघ"ा कर रहे है।’’7

प्रगतिवादी लेखक ने यथार्थवादी वि"ामताओं को प्रक्रियात्मक एवं व्याख्यात्मक बनाया है। सम एवं वि"ाम परिस्थितियों जीवन को उपेक्षात्मक एवं भ्रांतिमूलक बनाने से रोकती ह, जिससे जीवन निरंकुश न रहकर समाजवादी बन जाता है। लेकिन इन सब के लिये यथार्थवाद एवं मौलिकता का आपस में समन्वय है। नागार्जुन ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज को अवसरवादी न बनाकर चेतनावादी बनाने का प्रयास किया।

समकालीन समाज को अधिक जागरूक एवं श्रे"ठ बनाने के लिये उसे विमर्शकारी बनाया जा रहा है। जिससे उसमें सभी प्रकार के संवेदनात्मक, चेतनात्मक नयी विचारधारा विकसित हो, जिससे वह कई प्रकार की चुनौतियां सुझाव एवं समस्याओं का निराकरण हो सके। चेतना हमेशा व्यावहारिक स्वरूप को मूल्यांकित करती है। तभी मनु"य संघ"ा और चेतना का आपस में अवलोकनार्थ करता है। और जीवन को संचार मई एवं सूचना मई बनाकर उसे नये स्वरूप के रूप में परिलक्षित करता है। तभी जीवन का ‘ाातत्व सार एवं सनातनीय तत्वों का विम्ब एवं प्रतिबिंब के रूप में दिखलाई देते है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. जयश्री सुरेश पैलवानः भैरवप्रसाद गुप्त के कथा साहित्य में जनवादी चेतना, प्रकाशक–अन्यपूर्णा प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण 2014, पृ. 51
2. डॉ. उमेश चन्द्र पाण्डेयः नागार्जुन के उपन्यासों में जनवादी चेतना, प्रकाशक– राका प्रकाशन इलाहबाद, प्रथम संस्करण 2015, पृ. 13
3. डॉ. विद्याश्रीः आधुनिक हिन्दी साहित्य में जनवादी चेतना, अमन प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण 2010, पृ. 25
4. डॉ. अनिता बेलगांवकरः आँचलिक उपन्यासों में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना, अमन प्रकाशन– कानपुर, प्रथम संस्करण 2016, पृ. 21
5. डॉ. तात्याराव सूर्यवंशीः नागार्जुन के उपन्यासों में वर्ग चेतना, प्रकाशक– अन्नपूर्णा प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण 2010, पृ. 21
6. डॉ. अमर सिंह भदौरिया : नागार्जुन का कथा समाज और संघ"ाँ चेतना, प्रकाशक– अमन प्रकाशन सागर, प्रथम संस्करण 2009, पृ. 37
7. प्रो. प्रयणः नागार्जुन की सामाजिक चेतना, प्रकाशक– यात्री प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1995, पृ. 15